ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)/Impact Factor: 7.580

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 6, Issue 12, December 2019

रामधारी सिंह दिनकर के कथा साहित्य में जीवन मूल्यों की उपादेयता

KAPIL DEV KUNDARA

ASSISTANT PROFESSOR IN HINDI, HINDI DEPARTMENT, GOVT. COLLEGE, NADBAI, BHARATPUR, RAJASTHAN, INDIA

सार

मैं सोचता हूँ कि दिनकर की कविता में ऐसा क्या है जो हमें बार-बार आकर्षित करता है। वह है उनका खरापन, उनकी साफ़गोई और दिल खोल अंदाज़। उनकी कविता में गूँज और अनुगूँज बहुत है। दिनकर की कविताओं की सादगी बहुत प्रभावित करती है और कहन का तो कहना ही क्या? उनकी कविताओं में जनजागरण की विशेष खूबी है। ये कवितायें अनपढ़ों, किसानों, मज़दूरों और छोटे-छोटे लोगों को भी पसंद आती है। उनका एक प्रिय कविता का नारा सभी को बहुत पसंद आता है और आकर्षित भी करता है। वह है- सिंहासन खाली करो कि जनता आती है। इसमें कोई राजनैतिक पैटर्न नहीं है। एक सादगी है कि जो सरकार जनता के विश्वासों पर खरी नहीं उतरेगी। उसे सिंहासन खाली करना पड़ेगा। दिनकर जी से आप सहमत-असहमत हो सकते हैं लेकिन उनकी राष्ट्रीयता, उनका जनता के प्रति प्रेम और अगाध विश्वास दोनों लाजबाव हैं। मुझे उनकी एक कविता बार-बार याद आती है वह हमारे समय के द्वन्द्वों को निरन्तर आलोकित भी करती है। दिनकर हमें बार-बार आगाह करने वाले और निरन्तर टेरने वाले रचनाकार हैं।

परिचय

उनकी कविता की पदचापें हमें हमेशा जागृत करती हैं। वह कविता है ‘आग की भीख’-

बेचैन है हवायें, सब ओर बेकली है

कोई नहीं बताता किश्ती किधर चली है।

मजधार है, भंवर है या पास किनारा?

यह नाश आ रहा है या सौभाग्य का सितारा?[1]

मेरी दृष्टि में काव्यालोचन का क्षेत्र वीर पूजा का क्षेत्र नहीं होता। किसी भी रचनाकार का परीक्षण उसकी कृतियों, उसके समय की तमाम चुनौतियों, उसकी मान्यताओं और प्रतिक्रियाओं तथा विभिन्न विभीषिकाओं और विसंगतियों के आधार पर होता है। हिन्दी साहित्यालोचन की एक विकट समस्या यह भी रही है कि उसमें या तो स्नेह, पूजा, श्रद्धा का घनत्व रहा है या घृणा और तिरस्कार का। श्रद्धा, पूजा अथवा घृणा के अतिरेक में न जाने कैसे-कैसे जुमलें प्रचलित हो जाते हैं और उन जुमलों को झांझ मंजीरे की तान के साथ गाया बजाया भी जाता है। यह कीर्तनियां परम्परा कमोवेश अभी भी जारी है। आश्चर्य है कि असली मुद्दे लगभग गायब हो जाते हैं या उन्हें अनदेखा कर दिया जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा और रीतिकाल के अलग तरह के आचार्य कवि केशव ‘कठिन काव्य के प्रेत’ हो गये या ‘हृदयहीन’ हो गये। तुलसीदास कुछ की नज़र में ‘लोकवादी’ हो गये तो किसी ने उन्हें ‘लोकनायक’ की संज्ञा दी और किसी ने उन्हें ‘समाज का पथभ्रष्टक’ तक कह डाला। [6]इस दौर की आलोचना के मुद्दे या सूत्र या तो डॉ. रामविलास शर्मा के निरीक्षण परीक्षण से चलते रहे हैं या डॉ. नामवर सिंह की मान्यताओं के परिप्रेक्ष्य में अथवा कुछ बीच की धारा के आलोचकों की कथन भांगिमाओं में। कुछ भाषा भंगिमाओं के लहजे में। एक महत्वपूर्ण समस्या यह भी है कि या तो मुँह देखी हो रही है या लीपापोती अथवा उठाने और गिराने के खेल। मैं सोचता हूं कि इस तथ्य के सूत्र हमारी समकालीन आलोचना में खोजे जा सकते हैं। दिनकर जी के बारे में कुछ इसी तरह के सूत्र हिन्दी आलोचना में बिखर गये हैं मसलन ‘युगचारण दिनकर’ ‘जनकवि दिनकर’ युगकवि दिनकर या ‘दिग्भ्रमित राष्ट्रकवि दिनकर।’

दिनकर की कविता के दो मुख्य स्वर हैं। पहला क्रांति, विद्रोह और राष्ट्रीयता दूसरा प्रेम और श्रृंगार। उनके व्यक्तित्व में रोमैंटिक मिज़ाज की निर्णयकारी भूमिका है। क्रांति विद्रोह और राष्ट्रीयता में भी रोमैंटिक स्थितियां होती हैं। प्रेम और श्रृंगार में रोमैंटिक भाव सरणि होती ही है। यह भावभयता एक ऐसी धारा है जिसमें सब कुछ लुटाने की तमन्ना होती है। इसीलिये प्रेम करने वाला अपने प्रेम के लिये सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार होता है। उसी तरह क्रांतिकारी और विद्रोही भी अपना सब कुछ समर्पण के लिये तैयार होता है। क्रांतिकारियों के बलिदान एवं प्रेमियों के बलिदान इसके उदाहरण हैं। दिनकर की भावभयता में रोमैंटिक भावधारा की बहुत जबर्दस्त भूमिका हमेशा रही है। उनकी कविता के ताने-बाने में इसे सहज ही देखा जा सकता है।

दिनकर ने जिस समय लिखना शुरू किया वह आपाधापी और उथल-पुथल का समय था। राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन अपने उभार पर था। वह शोषण, उत्पीड़न और दमन की पराकाष्ठा का दौर भी था। राष्ट्र की अस्मिता दाँव पर लगी थी। उस समय राष्ट्र के सामने सबसे बड़ा सवाल देश की गुलामी के ख़िलाफ़ लोगों को जागृत करने का था। उनके भीतर की निराशा को दूर करके हौसले के साथ लड़ने के लिये तैयार करने का था। दिनकर जी ने अपनी कूबत भर यह काम मुस्तैदी के साथ किया भी। स्वयं दिनकर अपने आपको द्विवेदीयुगीन और छायावादी काव्य पद्धतियों का वारिस मानते रहे हैं। वे स्वच्छंद विचार रखने वाले व्यक्ति रहे हैं इसलिये उन्होंने अपनी कविता में भी कोई बंदिश नहीं लगाई। सब कुछ खुला-खुला, आडम्बर रहित, बेरोकटोक।

उन्होंने अपनी कविता पर बार-बार और सबसे ज़्यादा विचार किया है। उनका समूचा कृतित्व उनके स्वयं के आत्म परीक्षण के केन्द्र में है। उनका ऐतिहासिक काम यह रहा है कि उन्होंने हिन्दी कविता में छाये छायावादी कुहासे को छांटने का काम किया है। इसीलिए दिनकर की प्रवाहमयी-ओजस्वनी कविता का स्थान बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण है। उनकी कविता द्विवेदी युगीन काव्यधारा का आधुनिक ओजस्वी प्रगतिशील और मानवीय संस्करण है। 'काव्य की भूमिका' में वे लिखते हैं "हिन्दी की राष्ट्रीय कवितायें जो अब तक उपदेशों और प्रवचनों के नीरस भार ढोती आईं थीं, इसी काल में आकर अनुभूतियों के सच्चे आलोक से जगमगा उठीं और सीधे उपदेशों का आश्रय बनना छोड़कर उन्होंने अनुभूति के जोर से जनता का हृदय हिलाना शुरू कर दिया।" राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन से दिनकर की भी गहरी सम्बद्धता रही है। वे ब्रिटिश साम्राज्यशाही का विरोध करते हैं साथ ही क्रांति का आह्वान भी करते हैं। यह काम वे आज़ादी के पहले और बाद भी लगातार करते रहे। उनकी भावभयता और लगाव का यह स्पष्ट प्रमाण है।

दिनकर की कविता में ओज और पौरुष का स्वर है वह अकारण नहीं है। उसके मूल में राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का योग है। देश में चल रहे राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम ने उनकी चेतना को गढ़ा है। गरीबों की दुर्दशा, पीड़ित नंगे, दबे, कुचले और फटेहाल आदमी के जीवंत चित्र उनकी कविता में स्वाभाविक रूप से आये हैं क्योंकि वे उनकी ज़िन्दगी को करीब से जानते हैं। उनके परिवेश ने उनकी यथार्थ अनुभूति को सक्रिय ढंग से विकसित किया है -

"न्यायोचित सुख सुलभ नहीं, जब तक मानव-मानव को।
चैन कहाँ धरती पर तब तक, शांति कहाँ इस भव को।
जब तक मनुज-मनुज का यह सुख भाग नहीं सम होगा।
शमित न होगा कोलाहल संघर्ष नहीं कम होगा।

दिनकर जी ये समूची बातें भोलेपन से नहीं कहते। वे सोचते-विचारते हैं और लगभग निर्णयात्मक स्वर में जिम्मेदारी के साथ इन तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं। दिनकर कर कविता में भारतीय जनमानस के आलोरन के अनेक आयाम हैं। उनमें ओजस्विता गतिशीलता, विद्रोही भावनाओं, पहचानने की क्षमता भी है।

"ब्रम्हा से कुछ लिखा भाग्य में
मनुज नहीं लाया है
अपना सुख उसने अपने
भुजबल से ही पाया है।"

दिनकर की खासियत यह है कि वे युग के साथ चले हैं। वे अतीत का अवलोकन भर नहीं करते बल्कि अपने समय की चुनौतियों की जांच पड़ताल भी करते हैं। राष्ट्रीय आंदोलन में कभी जय मिलती है कभी पराजय। उन्होंने 'कुरुक्षेत्र' में भीष्म और युधिष्ठिर जैसे पात्रों के द्वारा क्रांति और कर्म का न केवल संदेश दिया, उसका लेखा-जोखा रखा और सतत प्रेरणा भी दी। कुरुक्षेत्र दो विश्व युद्धों की भीषण ज्वाला और नरसंहार का दिनकर की नज़र में समाधान है। क्रांति की भावनायें उनकी अनेक कविताओं में मिलती है। वे

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)/Impact Factor: 7.580

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 6, Issue 12, December 2019

भाग्यवाद, शोषण तंत्र का प्रतिकार करते हुये सहयोग श्रम और शांति का संदेश देते हैं। श्रम ही सब प्रकार की सुख समृद्धि का आधार है। जैसे -

"क्रांति धात्रि कविते! जाग उठ, आडम्बर में आग लगा दें।
पतन, पाप, पाखण्ड जले, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दें।
उठ वीरों की भाव तरंगिणि, दलितों के दिल की चिनगारी।
युग मर्दित यौवन की ज्वाला, जाग जाग री क्रांति कुमारी।।"[5]

विचार-विमर्श

'सामधेनी' में दिनकर की सामाजिक चेतना मानवीय क्षमताओं और विश्वासों की परिधि से, अपने देश के समसामयिक वातावरण के चित्रण के साथ विश्व प्रेम और उसकी पीड़ा का अनुभव कराती है। उनकी कविता के ऐसे दुर्लभ छोर खुलते हैं जिसमें संसार के दुख दैन्य की नई भंगिमायें हैं। उनका 'रेणुका' कविता संग्रह अतीत के गौरव के प्रति उनके आकर्षण का प्रतिबिम्बन है। साथ ही समकालीन जीवन के प्रति उदासीनता और दुखी, श्लथ त्रस्त और पस्त मनोविज्ञान का परिचय भी देता है।

दिनकर की कविताओं में जातीय चेतना का जो स्वरूप खुला है वह उनकी कविता को अत्यन्त प्राणवान, अर्थवान और संदर्भवान बनाता है। उन्होंने न केवल अपने काव्य संसार में वरन सकर्मक जीवन में भी साहस का परिचय दिया है। गरीबों की स्मृतियां, स्वयं के संघर्षशील व्यक्तित्व और संवेदनात्मकता उनकी वाणी को प्रखर बनाती हैं बल्कि उनके संघर्ष उनकी कविता की ताकत बनते हैं। वे छायावादियों से भी भिन्न हैं और गांधीवादियों से भी। उन्होंने राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है। जिनमें एक त्वरा, गहन आवेग और वैचारिक दृढ़ता भरपूर है। उनकी रचनात्मक प्रतिभा हमें गरिमा प्रदान कराती है। दिनकर स्वयं मानते हैं कि 'सच्चा काव्य जागृत पौरुष का निनाद है।' दिनकर का स्वभाव पलायन नहीं सिखाता। वे जूझने वाले संकल्पवान कवि हैं। वह हमारे भीतर साहस भरते हैं। हमें उठ खड़े होने के लिए ललकारते भी हैं। दिनकर की एक अन्यतम खूबी यह भी है कि उनकी कविता से लोगों ने कार्य की उत्तेजता प्राप्त की। 'मिट्टी की ओर' में वे लिखते हैं -

"जब दुनिया में चारों और आग लग गई हो, मनुष्य हिस्टीरिया में मुब्तिला हो और कौमें पागल कुत्ते की तरह आपस में लड़ रही हो, जब पराधीन जातियां अपनी तोकें उतार फेंकने के लिये बड़े-बड़े आंदोलन चला रही हों और साम्राज्यवाद, उन्हें कसकर बांधने के लिए नयी कड़ियां गढ़ रहा हो, जब युद्ध के अंत नये युद्ध के बीज बो रहे हों और मिनट-मिनट पर हृदय को हिला देने वाले संवाद कान पे पड़ रहे हो, तब कौन ऐसा कलाकार है जो अपनी वैयक्तिक भावनाओं को उचित से अधिक महत्व देने की धृष्टता करेगा।" (पृ.138)

इसे अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जायेगा कि जिस कवि ने साहस, संकल्प, ओज की अजस्र धारा प्रवाहित की हो वह अपने अंतिम दौर में पराजयबोध का शिकार होता है, वह 'हारे को हरि नाम' लिखता है। यह प्रश्न हर किसी को लगातार विचलित भी करता है। उसे लगता है कि ऐसा भी हो सकता है कि क्रान्तिकारिता का पराभव हारे को हरिनाम में हो जाय।

ध्यान देने की बात है कि हिमालय दिनकर का आदर्श था उसे वे स्वाभिमान के रूप में चित्रित करते हैं वे स्वयं हिमालय जैसे व्यक्तित्व के हैं। वे हिमालय से कई तरह के प्रश्न करते हैं। वे समाधिस्थ हिमालय को जगाना चाहते हैं। वे उसे भारत का तेजोमय प्रतीक भी मानते हैं -

कितनी द्रोपदियों के बाल खुले, किन-किन कलियों का अंत हुआ
कह हृदय खोल चित्तौर यहां, कितने दिन ज्वाल बसंत हुआ।
ले अंगड़ाई उठ हिले धरा, कर निज विराट स्वर में निनाद
शैल राट! हुँकार भरे, फट जाय कुहा, भागे प्रमाद।
तू मौन त्याग, कर सिंहनाद, रे तपी! आज तप का न काल
नव युग शंखध्वनि, जगा रही, तू जाग। जाग मेरे विशाल।

अपने देश की असमानता से दिनकर विचलित होते हैं। मजदूरों और कृषकों की स्थितियों को वे बिना किसी लाग लपेट के चित्रित करते हैं। वे मानते हैं कि समूचे अनर्थों की जड़ पूंजी का महाखेल हैं जिसने समाज को कई तरह से बांट दिया है। यहीं वे शहर और

गाँव के बीच की दूरियों का चित्रण भी करते हैं -

"विद्युत की इस चकाचौंध में देख दीप की लो रोती है।
अरी हृदय को थाम महल के लिए झोपड़ी बलि होती हैं।
देख कलेजा फाड़ कृषक, दे रहे हृदय शोणित की धारें
बनती ही उन पर जाती हैं वैभव की ऊँची दीवारें।"

दिनकर की कविता में ओज का स्वर ललकार में तब्दील होता है लेकिन उसमें विचार की सम्पदा है और जातीय चेतना का स्वरूप भी। वे श्रम के महत्व को स्वीकार करते हैं भाग्यवाद को तोड़ने की बात करते हैं। वे समाज की विषमताओं की वजह शोषण और लूट को मानते हैं। उन्होंने इस प्रवृत्ति का विश्लेषण अपनी कई कविताओं में किया है -

एक मनुज संचित करता है अर्थ पाप के बल से
और भोगता उसे दूसरा भाग्यवाद के छल से।

दिनकर इतिहास से हमेशा सवाल करते रहे हैं। सम्भवतः वे [4]इसीलिये बार-बार अतीत में लौटते हैं और उस अतीत में जो अच्छा है उसे वर्तमान में पाना चाहते हैं। वे 'परशुराम की प्रतीक्षा' करते हैं। रश्मिरथी में कर्ण की वीरता और उसके दृढ़ संकल्प उन्हें आकर्षित करते हैं। समय के कोलाहल को सुनने वाले वे अत्यन्त समर्थ कवि हैं। यह कोलाहल उन्हें कई रूपों में सुनाई पड़ता है। 'कुरुक्षेत्र' में दो विश्व युद्धों की हिंसा और विभीषिकाओं का साक्ष्य भी और युद्ध के ख़िलाफ़ एक पुकार भी। दिनकर की कविताओं में दो स्थितियां दो कार्य पद्धतियां हमेशा सक्रिय रहीं है। एक तो उनके भीतर रस की अजस्रधारा का प्रवाह है जिसमें कोमल भावनाओं की कल-कल करती उत्ताल तरंगे हैं, कल्पनाओं का घटाटोप है तो दूसरी ओर उनकी राष्ट्रीयता की भावनायें हैं जिनमें हिन्दुस्तान का दुःख दैण्य शोषण और अन्याय के अनगिनत चित्र हैं। दिनकर अतीत के वैभव के, अपने देश की गौरव गाथाओं के गायक हैं। उनके इस गायन में कई तरह की भाव-भंगिमायें हैं। गर्जन-तर्जन भी है और उखाड़-पछाड़ भी। क्रांति की भावनायें भी हैं और विद्रोह की प्रज्ज्वलित अग्नि भी।

जाहिर है कि उनकी कविता के दो ध्रुवान्त हैं। एक में उनकी परम्परा की जड़े हैं जिसमें मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चैहान, सोहन लाल द्विवेदी, श्याम नारायण पाण्डेय, बालकृष्ण शर्मा नवीन और माखनलाल चतुर्वेदी के पुनर्जागरण, विद्रोह, क्रांति और राष्ट्रीय काव्यधारा के सूत्र हैं तो दूसरी ओर उनकी प्रवृत्ति का साक्षात्कार। हमें उन्हें सुमित्रानंदन पंत और छायावाद के अत्यन्त निकट ले जाता है। उनकी कविताओं का एक तीसरा कोण भी है जो उन्हें मानवतावादी, मनुष्य प्रेमी बनाता है। माखन लाल चतुर्वेदी ने ठीक ही कहा है कि "दिनकर से इतिहास अपनी सम्पूर्ण वेदनाओं को लेकर बोलता है।" उनका यह इतिहास प्रेम अपने समय की जटिलताओं से दूर भागना नहीं है बल्कि इतिहास और वर्तमान को, समूची वास्तविकताओं को नई रोशनी में देखना भी है।

दिनकर ने अपने जीवन के आस-पास, चतुर्दिक अन्याय, शोषण, उत्पीड़न और विडम्बनाओं को देखा, जो अनुभव प्राप्त किये वे सहज रूप में उनकी कविताओं की परिधि तक आये हैं। मेरे ख़्याल से दिनकर की कविताओं में जो सहजता, सरलता और बेबाकपन है वह उनके सरल सौम्य स्वभाव को दर्शाता है। इसीलिये उनकी कविताओं में बनावटीपन नहीं है। उन्हें यह अच्छा नहीं लगता कि एक तरफ तो वैभव की रेल-पेल हो और दूसरी तरफ अभावों का, दुःख, दैन्य और शोषण का घनघोर यंत्रणादायक और विस्फोटक स्वरूप हो। 'भारत का यह देशमी नगर' कविता इसका साक्ष्य है -

"भारत धूलों से भरा, आंसुओं से गीला
भारत अब भी व्याकुल विपत्ति के घेरे में।
दिल्ली में तो है खूब ज्योति की चहल-पहल
पर, भटक रहा है सारा देश अंधेरे में।।
चल रहे ग्राम कुंजों में पछुआ के झकोर
दिल्ली, लेकिन ले रही लहर पुरवाई में
है विकल देश सारा अभाव के तापों से
दिल्ली सुख से सोई है नरम रजाई में।"

दिनकर की कविता में आजादी के पूर्व की परिस्थितियों के बड़े अद्‌भुत और यथार्थ चित्र हैं तो दूसरी ओर आजादी के बाद भारत की दुर्दशा, दैन्य, बदहाली, अफरा-तफरी और वास्तविक पीड़ा के हृदय विदारक दृश्य भी है। उन्होंने यथार्थ को ज्यों का त्यों व्यक्त

किया है। यह ऐसा यथार्थ है जिसके हम द्रष्टा, भोक्ता और कई-कई रूपों में जिससे हम प्रभावित होते हैं। जिससे हमारी विकास यात्रा लहूलूहान होती है और जिसकी वजह से आदमी शोषण की दैत्याकार मशीन में पिसता है। दिनकर राष्ट्रीय काव्य धारा के महत्वपूर्ण कवि हैं। विजेन्द्र नारायण सिंह उनकी राष्ट्रीयता के तीन रूपों की चर्चा करते हैं। अतीत का गौरव गान, वर्तमान की कारुणिक स्थिति तथा उसके निदान के लिए क्रांति का सहारा। उनमें उत्साह बहुत है। देश के लिये जिन्होंने अपने आप को सौंपा है। उनके प्रति दिनकर में खौलता हुआ वर्तमान है। तो स्वच्छन्दता वाद का तूफान भी है। साम्राज्यवाद का विरोध उनके यहाँ बहुत है। वे सामाजिक विषमता के हमेशा ख़िलाफ़ रहे हैं। वे समाज में समानता लाना चाहते हैं। वे कहते हैं-

"धर्म का दीपक क्षमा का दीप कब जलेगा, कब जलेगा
विश्व में भगवान।"

आवेग, उमंग, उत्साह उनकी कविता की पूँजी है। चीन युद्ध के पश्चात उन्होंने एक कविता लिखी थी। 'सिंहासन खाली करो कि जनता आती है। वे भाव दशाओं के उद्रेक के कवि हैं।

"सारी दुनिया उजड़ चुकी है
उजड़ चुका है मेला
ऊपर है बीमार सूर्य नीचे मैं मनुज अकेला।"

उनका एक दूसरा रूप भी है जिसकी छुटपुट चर्चा हुई लेकिन समग्रता के साथ उसका विश्लेषण नहीं हुआ। देखना चाहिए कि गर्जन-तर्जन के बावजूद उनकी कविता का एक स्वर कोमलता और कल्पनाशीलता का भी है। उनकी काव्यकृति 'रसवंती' में यौवन, सौन्दर्य और विरह के सुन्दर और मन मोहक चित्र प्रस्तुत हुये हैं। दिनकर का एक मिज़ाज रोमैंटिक कवि का भी है। देखना चाहिये कि स्वयं दिनकर अपनी कविताओं के बारे में क्या कहते हैं। "मैं कला के सामाजिक पक्ष का प्रेमी अवश्य बन गया था, किन्तु मेरा मन भी चाहता था कि गर्जन-तर्जन से दूर रहूँ और केवल ऐसी कवितायें लिखूँ, जिनमें कोमलता और कल्पना का उभार हो और सुयश तो मुझे 'हुंकार' से ही मिला। आत्मा मेरी अभी भी 'रसवंती' में बसती है। राष्ट्रीयता मेरे व्यक्तित्व के भीतर नहीं जन्मी, उसने बाहर से आकर मुझे आक्रांत किया है।" (चक्रवाल की भूमिका पृष्ठ 31-33)।[3]

परिणाम

अपनी कच्ची उम्र में दिनकर जी ने ये बातें नहीं कहीं। 'चक्रवाल' काव्य संग्रह का प्रकाशन 1956 में हुआ जिसमें रेणुका से लेकर नील कुसुम तक की चुनी हुई कवितायें संकलित हैं और यह उनकी प्रौढ़ता का दौर है। दिनकर का पहला संकलन 'वारदोली विजय' 1929 में प्रकाशित हुआ था। वे राष्ट्रीय प्रश्नों से जिस तरह रूबरू होते हैं उसी तरह उनकी एक और दुनिया है, जहाँ उनका मन रमता है और वे बार-बार वहाँ गोते लगाते हैं, वह है प्रेम और श्रृंगार की दुनिया। इसका सीधा अर्थ है कि दिनकर प्रेम और श्रृंगार के बहुत कुशल चितेरे हैं। 'उर्वशी इस रूप में उनकी शिखर रचना है और उनकी काव्य यात्रा का महत्वपूर्ण पड़ाव भी।' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, उर्वशी में उद्दाम मानस वेग को मानते हैं और यह भी कि वह नाद का प्रतिनिधित्व करती है। वह सृष्टि की प्राणधारा भी है। द्विवेदी जी उसे समस्त चित्त की उद्दाम चेतना कहते हैं। प्रिया के रूप में वह प्रचण्ड झंझा की तरह है, जो सभी को झकझोर देती है।

प्रियतम को रख सके निमज्जित, जो अतृप्ति के रस में
पुरुष बड़े सुख से रहता है, उस प्रमदा के वश में।

उर्वशी सौन्दर्य एवं प्रेम की साक्षात् प्रतिमा और चिर यौवना भी है। अप्सरा होते हुये भी मातृत्व के वात्सल्य से परिपूर्ण है। प्रेयसी, रमणी, अनिन्द्य सुन्दरी और रूपगर्विता भी वह है। दिनकर दो परस्पर विरोधी धाराओं में रचनारत रहे हैं। 'उर्वशी' पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्ति के अवसर पर दिये गये 'आत्म कथन' में उन्होंने अपनी मनोरचना का जिक्र किया है, "शुरू में ही मुझ पर रवीन्द्र और इकबाल का जो विरोधी प्रभाव पड़ गया, उसके कारण मैं काफी वर्षों तक बेचैन रहा।" जाहिर है कि यह प्रभाव मात्र दो महाकवियों भर का नहीं है, बल्कि उनकी अपनी प्रवृत्ति और प्रकृति का ही है। उनका भावसंसार और विचारसंसार अलग-अलग दो धुरियों पर हमेशा चलते रहे हैं और उसकी परिणतियां भी उनके परस्पर विरोधी रचना संसार में दिखाई पड़ती हैं। [2]उर्वशी का स्वरूप, संरचना और प्रवृत्ति के अनेक आयाम हैं। मुक्तिबोध ने उर्वशी के मनोविज्ञान के बारे में लिखा- "दिनकर कृत उर्वशी एक विलक्षण काव्य है। दैहिक काम संवेदनाओं की परिपूर्ति में परम तत्व के साक्षात्कार का प्रयत्न ही इस विलक्षणता को जन्म देता है।

कृत्रिम मनोविज्ञान ही इस विलक्षणता का प्राण है। उर्वशी का कामात्मक अध्यात्म एक अत्यन्त कृत्रिम मनोवैज्ञानिक व्यापार पर स्थित है।" (आलोचना-जुलाई, 1963)

पुरुष और स्त्री दोनों एक-दूसरे के लिये परम आकर्षण का केन्द्र रहे हैं। दिनकर काम को पुरुष और नारी के सनातन आकर्षण से उत्पन्न सहज प्रवृत्ति मानते हैं। यह आकर्षण सभी स्तरों पर है। वे लिखते हैं -

'कलम आज उनकी जय बोल
जला अस्थियाँ बारी-बारी
छिटकाई जिनने चिनगारी
जो चढ़ गये पुष्प वेदी पर
लिये बिना गरदन का मोल।"

उसी तरह देशप्रेम की भावना से आप्लावित वे कुछ और झाकियाँ हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। जैसे-

देह प्रेम की जन्मभूमि है पर उसके विचरण की
सारी लीला भूमि नहीं सीमित है रुधिर त्वचा तक।
यह सीमा प्रसरित है मन के गहन, गुह्य लोकों में
जहाँ रूप की लिपि अरूप की छवि आंका करती है
और पुरुष प्रत्यक्ष विभासित नारी मुख मण्डल में
किसी दिव्य, अव्यक्त कमल को नमस्कार करता है।

राष्ट्रीयता के सवाल उनके जीवन-मरण के प्रश्न रहे हैं। जनचेतना उनकी पक्षधरता का प्रस्थानक हैं। स्वतंत्रता के पहले का भारत जिस दौर में वे सुराज का समर्थन करते हैं और दूसरे आजादी के बाद देश की बिगड़ती हुई स्थिति, भ्रष्टाचार और बदहाली के ख़िलाफ़ शोषण, उत्पीड़न और लूट के खिलाफ वे लगातार आक्रामक संघर्ष करते हैं। वे राष्ट्रीयता के प्रति, स्वतंत्रता के प्रति लगातार सचेत रहे हैं। जन भावनाओं को सही संदर्भों में व्यक्त करने वाले वे अप्रतिम रचनाकार हैं। उनकी समूची रचनात्मकता समय के साथ संचालित एवं रूपायित होती रही है।

दिनकर की काव्य यात्रा छोटी नहीं है। दिनकर की अनेक विशिष्टतायें हैं दिनकर की कविता के अनेक स्वरूप हैं। डाॅ. खगेन्द्र ठाकुर ने लक्षित किया है कि- "दिनकर की शक्ति और विशिष्टता यह है कि आधुनिक कविता में किसी एक प्रवृत्ति और धारा के साथ न होकर भी वे आधुनिक कविता के विकास में अपनी सार्थकता और महत्ता सिद्ध करते हैं। उत्तेजना और संवेदना का सामंजस्य अपनी रचनात्मक भाषा में करने का, उसे पाने का प्रयोग उन्होंने किया है। उनकी इस रचनात्मक सामर्थ्य को व्यापक स्वीकृति प्राप्त है। दिनकर किसी काव्य प्रवृत्ति के प्रवर्तक नहीं है। वे इतिहास के चेतना के साथ मजबूती के साथ चलते रहे हैं।" उसकी कालावधि प्रदीर्घ है। वारदोली विजय, रेणुका, हुंकार, रसवंती, सामधेनी, नीलकुसुम, रश्मिरथी, कुरुक्षेत्र, चक्रवाल, परशुराम की प्रतीक्षा, कोयला और कवित्व, से लेकर उर्वशी और हारे को हरिनाम तक[1] के इस विशाल फलक में कवि सम्मेलनी वाहवाही और राष्ट्रीय पुनरुत्थानवाद अतीत की गौरव गाथा से लेकर उनके स्वयं के अनुभूत यथार्थ चित्र भी उनकी कविता में मुखर हुये हैं।

दिनकर का गद्य कम महत्वपूर्ण नहीं है। संस्कृति के चार अध्याय, 'शुद्ध कविता की खोज' काव्य की भूमिका, पंत प्रसाद और मैथिलीशरण और उनके अन्य समीक्षात्मक निबंध तथा समूची पुस्तकों की भूमिकायें उनकी कविता को समझने में हमारी मदद करती हैं। दिनकर की भाषा और शैली में प्रसाद गुण यथेष्ट है, प्रवाह है, ओज है, अनुभूति की तीव्रता है और सच्ची संवेदनात्मकता भी। उनकी कविता में लगातार चिन्तन मनन की प्रवृत्ति है। उनकी कविता में कहीं ठहराव नहीं है। उनकी कविता हिमालय की तरह धीर गम्भीर और नदी के समान लगातार बहाव है। उनमें संवेदना और विचार का समन्वय है। सम्वेदना सभी में स्पंदित होती है। वे हमेशा देश, परिवेश और सामाजिक सांस्कृतिक प्रश्नों से जूझते रहे हैं। देश की तात्कालिक समस्याओं के साथ ही साथ वे भारत की सभ्यता और संस्कृति के सवालों से निरंतर दो-चार होते हैं। वे जीवन मूल्यों के प्रति कई स्तरों पर जुड़ते हैं। जीवन से ऐसी गहरी सम्बद्धता और मनुष्यता के सामने आये संकटों से संवेदनात्मक स्तर पर लड़ने की कूबत उनमें अटूट है।

दिनकर का समूचा कृतित्व हमारे जातीय साहित्य की अमूल्य धरोहर है। उनकी कविता की दो धारायें हैं लेकिन ये दोनों धारायें जीवन के उद्दाम प्रवाह से निकली है। दिनकर का महत्व दिन व दिन बढ़ता जा रहा है तो निश्चित ही यह उनकी रचनाशीलता की

IJMRSETM

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)/Impact Factor: 7.580

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 6, Issue 12, December 2019

अन्यतम उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिये। उनकी कविता हमें सीना तान कर जीना सिखाती है। हमें कठिन से कठिन स्थितियों में भी साहस के साथ उठ खड़े होने को प्रेरित करती है। अंधेरे समय में लड़ने की अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने की वह राह दिखाती है। इसलिये उनकी प्रासंगिकता हमेशा बनी रहेगी।

रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय भावना का उद्घोष करने वाले दिनकर चिर युवा हैं, उनके काव्य में अपार उर्जा और प्रेरणा के ओजस्वी स्वर हैं। वे लिखते हैं कि व्यास ने भीष्म का जो चरित्र अंकित किया है, वह अत्यंत उच्चकोटि का है। आश्चर्य है कि उतना बड़ा मनुष्य दुर्योधन का नमक खाया था। दिनकर मानते हैं कि वास्तविक कारण यह था कि वे वृद्ध हो गए थे और कोई भी क्रांतिकारी निर्णय वृद्ध मनुष्य नहीं ले सकता। इन बातों से युवावस्था में, उर्जा में और कर्मठता में दिनकर की गहरी आस्था प्रकट होती है। उद्यमिता में अटूट विश्वास प्रकट होता हैः-''प्रकृति नहीं डरकर झुकती है, कभी भाग्य के बल से, सदा हारती वह मनुष्य के उद्यम से श्रमबल से।''

दृष्टि सभी में होती है, अंतरदृष्टि विरलों में। सवाल है कि वाह्य जगत को देखने वाली आंखें क्या कभी मन के दरवाजे पर दस्तक दे पाती हैं ? ''उर्वशी'' दिनकर की काव्य प्रतिभा की ऐसी ही फल सिद्धि है जो उनके मन में पहले से ही 'कहीं पड़ी हुई' थी। 'उर्वशी' वास्तव में ऐन्द्रिकता के सहारे अतीन्द्रिय जगत् के संस्पर्श का सफल प्रयास है, काम, अध्यात्म और प्रेम का साहित्यिक चित्रांकन है। मानव-मन की सहज भावनाओं को समेटने वाली उर्वशी को छेड़ना जितना सरल है, छोड़ना उतना ही कठिन। अपनी इस कृति में राग के अतुल्य उद्गाता दिनकर ने एक सहज मानवीय कथ्य को सरल किंतु सशक्त शिल्प में ऐसा आकार दिया है कि हृदय के तार झंकृत हुए बिना रह ही नहीं सकतेः-'' और वक्ष के कुसुम-कुंज, सुरभित विश्राम-भवन ये, जहां मृत्यु के पथिक ठहर कर श्रान्ति दूर करते हैं।''

प्रेम क्या है ? क्या कोई शर्त, कोई आकांक्षा, कोई संतुष्टि, कोई तर्क, कोई भावना, किसी इच्छा की पूर्ति, कोई कामना या फिर वासना ? प्रेम [2]के आयामों का क्षितिज कितना विस्तार ग्रहण कर सकता है ? क्या पुरूरवा का भौतिक प्रेम उसे आध्यात्मिक जगत में नहीं पहुंचाता ? उसमें काम का कौन सा रूप विद्यमान था जिसने उसे ईश्वर की ओर उन्मुख किया ? काम जिसका अर्थ आज के भूमण्डलीकृत विश्व में 'सेक्स' तक सिमटकर रह गया है, की प्रेम में क्या भूमिका है ? क्या सेक्स जैसा शब्द काम के उचित महत्व को समग्रता में रूपायित कर पाता है ? और फिर काम, प्रेम के मार्ग में साधक है या बाधक ? या इन दोनों से परे, पलायनवाद का आराधक ? ''उर्वशी में ऐसे कितने सवाल हैं जो अनुत्तरित मौन के दायरे में भयंकर तूफान खड़ा करते हैं। दिनकर लिखते हैं कि उर्वशी चक्षु, रसना, घ्राण, त्वक् तथा स्त्रोत की कामनाओं का प्रतीक है, पुरूरवा रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द से मिलनेवाले सुखों से उद्वेलित मनुष्य। पुरूरवा द्वन्द में है, क्योंकि द्वन्द में रहना मनुष्य का स्वभाव है। मनुष्य सुख की कामना भी करता है और उससे आगे निकलने का प्रयास भी। नारी नर को छूकर तृप्त नहीं होती, न नर नारी के आलिंगन से संतोष मानता है। कोई शक्ति है जो नारी को नर तथा नर को नारी से अलग रहने नहीं देती, और जब वे मिल जाते हैं, तब भी, उनके भीतर किसी ऐसी तृषा का संचार करती है, जिसकी तृप्ति शरीर के धरातल पर अनुपलब्ध है।

नारी के भीतर एक और नारी है, जो अगोचर और इन्द्रियातीत है। इस नारी का संधान पुरूष तब पाता है, जब शरीर की धारा, उछालते-उछालते, उसे मन के समुद्र में फेंक देती है, जब दैहिक चेतना से परे, वह प्रेम की दुर्गम समाधि में पहुंचकर निस्पन्द हो जाता है।

और पुरूष के भीतर भी एक और पुरूष है, जो शरीर के धरातल पर नहीं रहता, जिसमें मिलने की आकुलता में नारी अंग संज्ञा के पार पहुंचना चाहती है।

परिरंभ पाश में बंधे हुए प्रेमी, परस्पर एक दूसरे का अतिक्रमण करके, किसी ऐसे लोक में पहुंचना चाहते हैं, जो किरणोज्जवल और वायवीय है। इन्द्रियों के मार्ग से अतीन्द्रिय धरातल का स्पर्श, यही प्रेम की आध्यात्मिक महिमा है।

कवि और कविता का अपने समय के सभी सरोकारों से गहरा रिश्ता होता है। कवि की दृष्टि बहुत ही सूक्ष्म होती है। दिनकर के शब्दों में कवि सामाजिक जीव होता है। इसीलिए समर्थ रचनाकार सृजन की प्रक्रिया के दौरान काल के विशाल खण्डों में व्याप्त सार्थक चरित्रों को उठाता है। ऐसा करते हुए वह संकुचित दुनिया और सीमित बुद्धि जैसे अनेक कारकों के खिलाफ विद्रोह का झण्डा बुलंद करता है जो कला की दुनिया को परंपराओं और रूढ़ियों में कैद किए रखना चाहते हैं। ''रश्मिरथी'' के कर्ण चरित्र के उद्धार के लिए दिनकर द्वारा किया गया एक ऐसा ही महान प्रयास है, जहाँ सामाजिक विसगतियां भलीभांति रेखांकित कर ली गई हैं। दानवीर कर्ण

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)/Impact Factor: 7.580

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 6, Issue 12, December 2019

का चरित्र निखरकर हमारे सामने पूरे औदात्य के साथ आता हैः-''मित्रता बड़ा अनमोल रतन, कब इसे तोल सकता है धन ?'' दिनकर की ऐसी अनेक कविताएं हैं जो काव्य की सोद्देश्यता की अनुपम व्याख्याएं प्रस्तुत करती हैं, कला के मानवीय प्रयोजन को रेखांकित करती हैं और साहित्य की सार्थकता को सिद्ध करती हैं।

किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व [3]की व्यंजना उसकी कृतियों से होती है। दिनकर की गद्य और पद्य मिलाकर कुल तकरीबन साठ कृतियां हैं। इसके अलावा ''दिनकर की डायरी'' भी दिनकर को समझने में काफी मदद करती है। उनकी डायरी इन्द्रधनुषी भावजगत के विविध आयामों से हमारा साक्षात्कार कराती है। पत्रों और डायरियों में दिनकर ने लिखा है कि जो पद हमें नहीं मिला है, अपने को उसके योग्य सिद्ध करना आसान है, किन्तु जिस पद पर हम हैं, उसकी योग्यता सिद्ध करना बड़ा कठिन काम है।.......छलपूर्ण प्रशंसा से उपयोगी आलोचना श्रेष्ठ है, मगर कम ही लेखक उसे पसन्द करते हैं।......महापुरूषों की कीर्ति उन साधनों से नापी जानी चाहिए, जिनका प्रयोग कीर्ति पाने के लिए किया गया हो।......जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, आदमीं के ज्ञान के साथ उसकी मूर्खता में भी वृद्धि होती है।......विरह छोटे प्रेम को संकीर्ण और बड़े प्रेम को विस्तृत बनाता है। तूफान दीये को बुझा देता है किंतु होली की आग को खूब भड़काता है। दिनकर की लेखनी में ऐसी अनेक बातें हैं, जो साहित्यकारों समेत सभी के लिए उपयोगी और प्रांसगिक हैं। आगे भी रहेंगी।

जनतंत्र का जनम में सिंहासन खाली करो, कि जनता आती है......लिखकर कवि ने यही साबित किया है कि राजनीति और प्रशासन को जनता के हित के लिए काम करना चाहिए क्योंकि जनता, सचमुच ही बड़ी वेदना सहती है। फावड़े और हल को राजदंड बनाने का दिनकर का स्वप्न क्या हमें एक शांतिपूर्ण समाज-रचना की ओर अग्रसर नहीं करता। सिमरिया में जन्में दिनकर को खेतों और खलिहानों और किसानों से बहुत प्रेम रहा है। जिस तरह सामर सेट माम को भारत में और कुछ चाहे दिखा हो या न दिखा हो, यहां के किसान उन्हें जरूर दिखे थे, उसी तरह दिनकर की दृष्टि भी कोमल संवेदनाओं से युक्त है। शायद इसीलिए पक्षियों और बादलों को भगवान के डाकिए मानने वाले दिनकर ने वैभव की दीवानी दिल्ली को कृषक-मेघ की रानी कहा है।

दिनकर के पास सुस्पष्ट ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का एक मजबूत हथौड़ा है, जिससे वे अतीत की चट्टान तोड़कर वर्तमान की वेगवान धारा निकालते है। समकालीन समस्याओं के निदान और मानवता के संकटों को सुलझाने के लिए उन्होंने कई बार इतिहास का सहारा लिया है। लेकिन उनका उद्देश्य क्या इतिहास को दुहराना भर ही था ? नहीं। उन्होंने अनेक स्थलों पर लिखा भी है कि उनके लक्ष्य उच्चतर रहे हैं। आखिर वर्तमान की उत्पति अतीत के गर्भ से ही होती है। अतीत की दुर्भेद्य किले की उंची-उंची चाहर दीवारें लांघकर ही समकालीनता की एक विधायक समझ बनायी जा सकती है। कच्ची पगडंडियों और पथरीली राहों पर चलने वाले साहसी पथिकों की यात्राएं दुर्गम, बीहड़ और पीड़ादायी तो होती है, लेकिन बिना प्रसव-पीड़ा के कोई जनम भी नहीं होता।''उर्वशी'' के लिए दिनकर ने यह पीड़ा लगातार आठ वर्षो तक झेली है।

क्या कोई रचनाकार न्याय और अन्याय, सृजन और विनाश या स्वार्थ और परमार्थ जैसी विरोधी स्थितियों के बीच उदासीन बना रह सकता है ? तटस्थ बना रह सकता है ? तटस्थ रहने में सुरक्षा तो मिल सकती है, दायित्व-निर्वहन का तोष[4] नहीं मिल सकता, समरभूमि में शहीद होने का आनंद नहीं मिल सकता। दिनकर ने तटस्थता को कोई मूल्य नहीं माना है। वे तटस्थता के बहेलिए हैं। उन्होंने लिखा हैः-

''समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,

जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध।''

दिनकर जी ने स्वयं ''रश्मिरथि'' मे लिखा हैः ''बाधाएं कब रोक सकी हैं, आगे बढ़ वालों को, विपदाएं कब मार सकी हैं, मरकर जीने वालों को।

दिनकर जी की लेखनी गहन भावनाओं की प्रवाहमान धारा है। उसमें अगर उल्लास मौजूद है, तो यथार्थबोध की पीड़ा भी है। अगर हर्ष का प्रकाश है, तो विषाद का धुंॅधलका भी है। दृढ़ निश्चय का स्वच्छ आकाश है, तो द्वन्द का कुहासा भी। गर्जन है, तो वेदना की लकीरें भी। व्यवस्था के प्रति क्षोभ है, तो एक बेहतर विश्व की आशा भी। सौभाग्य की मंजूषा है, तो अपनों के कष्टों का दुर्भाग्य भी, मुसीबतों का अंबार भी, क्षुब्धता का पारावार भी और मौन का हाहाकार भी। शायद इसीलिए बहुरंगी विचारों के धनी दिनकर के बगीचे में सभी रंगों

ISSN: 2395-7639

International Journal of Multidisciplinary Research in Science, Engineering, Technology & Management (IJMRSETM)

(A Monthly, Peer Reviewed Online Journal)/Impact Factor: 7.580

Visit: www.ijmrsetm.com

Volume 6, Issue 12, December 2019

के फूल खिलते हैं। उनके व्यक्तित्व का व्यापक धरातल और मस्तिष्क की उर्वर खाद ही वह आधार है, जहां से ये फूल खुश्बू और रंगत बटोरकर दुनिया को खूबसूरत बनाते हैं। उसमें ताजगी भरते हैं।

यह दिनकर हैं जिन्हें हालात ने वेदनाओं से नहलाया है, आंसुओं से धोया है और कांटों से पिरोया हैः-''जलन हूं, दर्द हूं, दिल की कसक हूं, किसी का हाय खोया प्यार हूं मैं।'' दिनकर की रचनाओं में संवेदनाओं के दर्शन बड़ी आसानी से किए जा सकते हैंः-'प्राणभंग' से लेकर 'हारे को हरिनाम' तक। उनमें वेदना की अनुभूति कर पाने की सामर्थ्य है। शायद इसीलिए उनका हृदय व्योम सा है क्योंकि वे जानते हैंः-''हृद्य छोटा हो, तो शोक वहां नहीं समायेगा। और दर्द दस्तक दिए बिना लौट जायेगा।''

हृद्य की यह विशालता उन्हें राष्ट्रकवि ही नहीं, महान गद्यकार, चिंतक, संस्कृति-विद्वान और सबसे बढ़कर एक उम्दा इंसान बनाती है। ऐसा इंसान जिसे आमजन-जीवन की चिंता है, देश समाज, संस्कृति और विश्व की चिंता है। युद्ध जैसी वैश्विक समस्या को लेकर लिखी गई उनकी कृति ''कुरूक्षेत्र'' क्या यह साबित नहीं करती कि युद्ध में चाहे जो पक्ष जीते, हार तो मानवता को ही झेलनी पड़ती है ? मानवता की रक्षा के लिए लेखनी उठाना क्या एक महान रचनात्मक कर्म नहीं ? मानवता को हार से बचाने के लिए जब दिनकर अतीत की खिड़कियां खोलकर बाहर झाकते हैं और परदों की धूल झाड़ते हैं यह क्या ! वहां भी वही बेबसी। विनाश। चित्कार। धधकता अंबर। दूर तक चीखता सन्नाटाः-'' वह कौन रोता है वहां, इतिहास के अध्याय पर !''

सत्ता-केन्द्र हमेशा जगमगाता है और जितना जगमगाता है उतना ही चकाचौंध का अंधेरा जन-मन में भरता जाता है, सत्ता-केन्द्र का वस्तु जगत हमारे भाव को अजब तरह से घूरने लगता है। हम इतिहास -केन्द्रों, पर पहुंचकर[5] भी इतिहास पढ़ना भूल जाते हैं और यथार्थ पढ़ते हैंः:-

''तामस बढ़ता यदि गया धकेल प्रभा को, निर्बंध पंथ यदि नहीं मिला प्रतिभा को,

रिपु नहीं, यही अन्याय हमें मारेगा, अपने घर में ही फिर स्वदेश हरेगा।''

एक लंबी काव्य यात्रा के बाद भी दिनकर को लगा कि जिंदगी की किताब तों खाली की खाली रह गई। शुक्र सिर्फ इतना कि एक सपाट, इकहरी और इकलौती जिंदगी उन्होंने नहीं जीः- '' शुक्र है कि इसी जीवन में /मैं अनेक बार जन्मा/और अनेक बार मरा हूं/।'' जाहिर है कि दिनकर अंत तक कवि रहे नित्य नूतन चाहे उन्हें इसके लिए नए-नए जन्म ही क्यों न लेने पड़े हों।

कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने अंतरराष्ट्रीय और सबसे बढ़कर मानवीय भावनाओं एवं कृत्यों से ओत-प्रोत गद्य और पद्य लिखकर न केवल साहित्य को समृद्ध बनाया बल्कि अपने साहित्य के माध्यम से मानवता के प्रति मानव के कर्तव्य को भी चित्रित किया। परिणाम स्वरूप दिनकर ने छायावादोत्तर युग के साहित्येतिहास में एक गौरवपूर्व अध्याय जोड़ दिया। जब छायावादी कवि अलौकिक जगत् में विचरण कर रहे थे तो दिनकर लौकिक जगत की सच्चइयों से सराबोर साहित्य के सृजन में जुटे थे।

निष्कर्ष

रामधारी सिंह 'दिनकर' ' (23 सितम्बर 1908- 24 अप्रैल 1974) हिन्दी के एक प्रमुख लेखक, कवि व निबन्धकार थे।[1][2] वे आधुनिक युग के श्रेष्ठ वीर रस के कवि के रूप में स्थापित हैं। राष्ट्रवाद अथवा राष्ट्रीयता को इनके काव्य की मूल-भूमि मानते हुए इन्हे 'युग-चारण' व 'काल के चारण' की संज्ञा दी गई है।[3]

'दिनकर' स्वतन्त्रता पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। वे छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। एक ओर उनकी कविताओं में ओज, विद्रोह, आक्रोश और क्रान्ति की पुकार है तो दूसरी ओर कोमल शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति है। इन्हीं दो प्रवृत्तियों का चरम उत्कर्ष हमें उनकी कुरुक्षेत्र और उर्वशी नामक कृतियों में मिलता है।

जीवनी

'दिनकर' जी का जन्म 24 सितंबर 1908 को बिहार के बेगूसराय जिले के सिमरिया गाँव में भूमिहार ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उन्होंने पटना विश्वविद्यालय से इतिहास राजनीति विज्ञान में बीए किया। उन्होंने संस्कृत, बांग्ला, अंग्रेजी और उर्दू का गहन अध्ययन किया था। बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक विद्यालय में अध्यापक हो गये। १९३४ से १९४७ तक बिहार सरकार की सेवा में सब-रजिस्टार और प्रचार विभाग के उपनिदेशक पदों पर कार्य किया। १९५० से १९५२ तक लंगट सिंह कालेज मुजफ्फरपुर में हिन्दी के विभागाध्यक्ष रहे, भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति के पद पर 1963 से 1965 के बीच कार्य किया और उसके बाद भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार बने।

उन्हें पद्म विभूषण की उपाधि से भी अलंकृत किया गया। उनकी पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय [4] के लिये साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा उर्वशी के लिये भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया गया। अपनी लेखनी के माध्यम से वह सदा अमर रहेंगे।

द्वापर युग की ऐतिहासिक घटना महाभारत पर आधारित उनके प्रबन्ध काव्य कुरुक्षेत्र को विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ काव्यों में ७४वाँ स्थान दिया गया।[5]

1947 में देश स्वाधीन हुआ और वह बिहार विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रध्यापक व विभागाध्यक्ष नियुक्त होकर मुज़फ़्फ़रपुर पहुँचे। 1952 में जब भारत की प्रथम संसद का निर्माण हुआ, तो उन्हें राज्यसभा का सदस्य चुना गया और वह दिल्ली आ गए। दिनकर 12 वर्ष तक संसद-सदस्य रहे, बाद में उन्हें सन 1964 से 1965 ई. तक भागलपुर विश्वविद्यालय का कुलपति नियुक्त किया गया। लेकिन अगले ही वर्ष भारत सरकार ने उन्हें 1965 से 1971 ई. तक अपना हिन्दी सलाहकार नियुक्त किया और वह[6] फिर दिल्ली लौट आए। फिर तो ज्वार उमरा और रेणुका, हुंकार, रसवंती और द्वंद्वगीत रचे गए। रेणुका और हुंकार की कुछ रचनाऐं यहाँ-वहाँ प्रकाश में आईं और अग्रेज प्रशासकों को समझते देर न लगी कि वे एक ग़लत आदमी को अपने तंत्र का अंग बना बैठे हैं और दिनकर की फ़ाइल तैयार होने लगी, बात-बात पर क़ैफ़ियत तलब होती और चेतावनियाँ मिला करतीं। चार वर्ष में बाईस बार उनका तबादला किया गया।

रामधारी सिंह दिनकर स्वभाव से सौम्य और मृदुभाषी थे, लेकिन जब बात देश के हित-अहित की आती थी तो वह बेबाक टिप्पणी करने से कतराते नहीं थे। रामधारी सिंह दिनकर ने ये तीन पंक्तियाँ पंडित जवाहरलाल नेहरू के विरुद्ध संसद में सुनायी थी, जिससे देश में भूचाल मच गया था। दिलचस्प बात यह है कि राज्यसभा सदस्य के तौर पर दिनकर का चुनाव पणृडित नेहरु ने ही किया था, इसके बावजूद नेहरू की नीतियों का विरोध करने से वे नहीं चूके।

देखने में देवता सदृश्य लगता है
बंद कमरे में बैठकर गलत हुक्म लिखता है।
जिस पापी को गुण नहीं गोत्र प्यारा हो
समझो उसी ने हमें मारा है॥

1962 में चीन से हार के बाद संसद में दिनकर ने इस कविता का पाठ किया जिससे तत्कालीन प्रधानमंत्री नेहरू का सिर झुक गया था. यह घटना आज भी भारतीय राजनीति के इतिहास की चुनिंदा क्रांतिकारी घटनाओं में से एक है.

रे रोक युद्धिष्ठिर को न यहां जाने दे उनको स्वर्गधीर
फिरा दे हमें गांडीव गदा लौटा दे अर्जुन भीम वीर॥[6]

इसी प्रकार एक बार तो उन्होंने भरी राज्यसभा में नेहरू की ओर इशारा करते हुए कहा- "क्या आपने हिंदी को राष्ट्रभाषा इसलिए बनाया है, ताकि सोलह करोड़ हिंदीभाषियों को रोज अपशब्द सुनाए जा सकें?" यह सुनकर नेहरू सहित सभा में बैठे सभी लोगसन्न रह गए थे। किस्सा 20 जून 1962 का है। उस दिन दिनकर राज्यसभा में खड़े हुए और हिंदी के अपमान को लेकर बहुत सख्त स्वर में बोले। उन्होंने कहा-

देश में जब भी हिन्दी को लेकर कोई बात होती है, तो देश के नेतागण ही नहीं बल्कि कथित बुद्धिजीवी भी हिन्दी वालों को अपशब्द कहे बिना आगे नहीं बढ़ते। पता नहीं इस परिपाटी का आरम्भ किसने किया है, लेकिन मेरा ख्याल है कि इस

परिपाटी को प्रेरणा प्रधानमंत्री से मिली है। पता नहीं, तेरह भाषाओं की क्या किस्मत है कि प्रधानमंत्री ने उनके बारे में कभी कुछ नहीं कहा, किन्तु हिन्दी के बारे में उन्होंने आज तक कोई अच्छी बात नहीं कही। मैं और मेरा देश पूछना चाहते हैं कि क्या आपने हिंदी को राष्ट्रभाषा इसलिए बनाया था ताकि सोलह करोड़ हिन्दीभाषियों को रोज अपशब्द सुनाएँ? क्या आपको पता भी है कि इसका दुष्परिणाम कितना भयावह होगा?

यह सुनकर पूरी सभा सन्न रह गई। ठसाठस भरी सभा में भी गहरा सन्नाटा छा गया। यह मुर्दा-चुप्पी तोड़ते हुए दिनकर ने फिर कहा- 'मैं इस सभा और खासकर प्रधानमन्त्री नेहरू से कहना चाहता हूँ कि हिन्दी की निन्दा करना बन्द किया जाए। हिन्दी की निन्दा से इस देश की आत्मा को गहरी चोट पहुँचती है।'[7]

प्रमुख कृतियाँ

उन्होंने सामाजिक और आर्थिक समानता और शोषण के खिलाफ कविताओं की रचना की। एक प्रगतिवादी और मानववादी कवि के रूप में उन्होंने ऐतिहासिक पात्रों और घटनाओं को ओजस्वी और प्रखर शब्दों का तानाबाना दिया। उनकी महान रचनाओं में रश्मिरथी और परशुराम की प्रतीक्षा शामिल है। उर्वशी को छोड़कर दिनकर की अधिकतर रचनाएँ वीर रस से ओतप्रोत है। भूषण के बाद उन्हें वीर रस का सर्वश्रेष्ठ कवि माना जाता है।

ज्ञानपीठ से सम्मानित उनकी रचना उर्वशी की कहानी मानवीय प्रेम, वासना और सम्बन्धों के इर्द-गिर्द घूमती है। उर्वशी स्वर्ग परित्यक्ता एक अप्सरा की कहानी है। वहीं, कुरुक्षेत्र, महाभारत के शान्ति-पर्व का कवितारूप है। यह दूसरे विश्वयुद्ध के बाद लिखी गयी रचना है। वहीं सामधेनी की रचना कवि के सामाजिक चिन्तन के अनुरुप हुई है। संस्कृति के चार अध्याय में दिनकरजी ने कहा कि सांस्कृतिक, भाषाई और क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद भारत एक देश है। क्योंकि सारी विविधताओं के बाद भी, हमारी सोच एक जैसी है।

दिनकरजी को उनकी रचना कुरुक्षेत्र के लिये काशी नागरी प्रचारिणी सभा, उत्तरप्रदेश सरकार और भारत सरकार से सम्मान मिला। संस्कृति के चार अध्याय के लिये उन्हें 1959 में साहित्य अकादमी से सम्मानित किया गया। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद ने उन्हें 1959 में पद्म विभूषण से सम्मानित किया। भागलपुर विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलाधिपति और बिहार के राज्यपाल जाकिर हुसैन, जो बाद में भारत के राष्ट्रपति बने, ने उन्हें डॉक्ट्रेट की मानद उपाधि से सम्मानित किया। गुरू महाविद्यालय ने उन्हें विद्या वाचस्पति के लिये चुना। 1968 में राजस्थान विद्यापीठ ने उन्हें साहित्य-चूड़ामणि से सम्मानित किया। वर्ष 1972 में काव्य रचना उर्वशी के लिये उन्हें ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया। 1952 में वे राज्यसभा के लिए चुने गये और लगातार तीन बार राज्यसभा के सदस्य रहे।

मरणोपरान्त सम्मान

30 सितम्बर 1987 को उनकी 13वीं पुण्यतिथि पर तत्कालीन राष्ट्रपति जैल सिंह ने उन्हें श्रद्धांजलि दी। 1999 में भारत सरकार ने उनकी स्मृति में डाक टिकट जारी किया। केंद्रीय सूचना और प्रसारण मन्त्री प्रियरंजन दास मुंशी ने उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर रामधारी सिंह दिनकर- व्यक्तित्व और कृतित्व पुस्तक का विमोचन किया।

उनकी जन्म शताब्दी के अवसर पर बिहार के मुख्यमन्त्री नीतीश कुमार ने उनकी भव्य प्रतिमा का अनावरण किया। कालीकट विश्वविद्यालय में भी इस अवसर को दो दिवसीय सेमिनार का आयोजन किया गया।[7]

संदर्भ

1. जीवनी एवं रचनाएँ Archived 2006-07-13 at the वेबैक मशीन अनुभूति पर.
2. ↑ "साहित्य अकादमी पुरस्कार". मूल से 7 अगस्त 2016 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 फ़रवरी 2009.

3. ↑ Dāmodara, Śrīhari (1975). Ādhunika Hindī kavitā meṃ rāshṭrīya bhāvanā, san 1857-1947. Bhārata Buka Ḍipo. पृ॰ 472. उन्हें युग चारण की संज्ञा देकर हिन्दी के आलोचकों ने उनके काव्य की मूल भूमि को राष्ट्रीयता माना है।
4. ↑ Sahitya Akademi Awards 1955-2007 Archived 2007-07-04 at the वेबैक मशीन साहित्य अकादमी पुरस्कारों का आधिकारिक जाल स्थल
5. ↑ "Top 100 famous epics of the World" [विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य] (अंग्रेज़ी में). मूल से 14 दिसंबर 2013 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 9 दिसम्बर 2013.
6. ↑ वो थे दिनकर, जिन्होंने संसद में नेहरू के खिलाफ पढ़ी थी कविता
7. ↑ नई दुनिया, सम्पादकीय पृष्ठ, दिनांक ११ फरवरी, २०२०